रणनीतिक संचार संदर्भ सामग्री - भाग 7

सुनना, संवाद करना और सीखना?

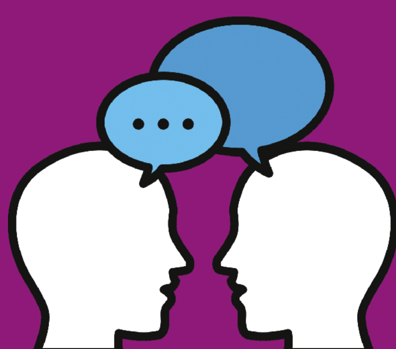

VIKAS SAMVAD

लेखन

सचिन कुमार जैन

सह लेखन और संपादन

पूजा सिंह, राकेश कुमार मालवीय, विश्वंभर त्रिपाठी,
संदीप नाईक, निधि तिवारी, जावेद अनीस, राजेश भदौरिया,
सत्यम पांडेय, उपासना बेहार, अनिल धीमान,
कार्तिक शर्मा, पिंकी वर्मा

मार्गदर्शन

चिन्मय मिश्र, गुरुशरण सचदेव

> सामाजिक संस्थाओं ने समाज में बदलाव का जो स्वप्न देखा है, वह सबका साझा सपना तभी बन सकता है जब समुदाय स्वयं उस परिवर्तन का नेतृत्व करे।

यह तभी होगा जब सामाजिक कार्यकर्ता समुदाय की बातों को सुने, उनसे चर्चा करे और हर जरूरी सीख को अपनाए। सामुदायिक प्रशिक्षण या बैठक के दौरान हर सहभागी की बातों को गौर से सुना जाना चाहिए। उनके अनुभव और उनकी चुनौतियां संस्थाओं को जमीनी परिस्थितियों का आकलन करने में सहायक हो सकती हैं।

संवाद को संवाद ही रहने दें उसे कभी बहस न बनने दें। ऐसा इसलिए क्योंकि बहस कई बार अपनी बात मनवाने की जिद में कटुती की ओर ले जाती है जबकि संवाद बातचीत के लिए जरूरी खुलापन लिए होता है। संवाद के दौरान पूर्वाग्रह न बनाएं, मतभेदों का सम्मान करें तथा संवाद की प्रक्रिया का अगला चरण है अभिमत अर्थात फीडबैक देना। किसी भी काम के बारे में दिया गया अभिमत उसे बेहतर बनाने में मदद करता है। सार्वजनिक अभिमत में सराहना का भाव रखें जबकि आलोचनात्मक टिप्पणी भरसक अकेले में करने का प्रयास करें। संवादों का दस्तावेजीकरण करें, यह भविष्य में विश्लेषण अथवा अवलोकन में सहायक साबित होता है।

सुनना, संवाद करना और सीखना?

सुनना, संवाद करना और सीखना?

- एक सामाजिक नागरिक संस्था के रूप में हमने एक सपना देखा है सामाजिक बदलाव का, समाज को बेहतर बनाने का। उसी सपने को पूरा करने के लिए हम एक प्रतिबद्ध पहल कर रहे हैं।
- खुद से यह सवाल पूछना जरूरी है कि अगर हमारा सपना हमारी आँखों तक ही सीमित रह जाएगा, तो क्या वास्तव में वह सपना पूरा हो पाएगा? क्या यह जरूरी नहीं है कि वही सपना और लोगों-समूहों की आँखों में भी समा जाए।
- अगर यह जरूरी है तो यह कैसे सम्भव होगा कि हमारा सपना एक साझा सपना बन जाए।
- इसके लिए जरूरी है समुदाय का नेतृत्व संभालना। समुदाय नेतृत्व संभाले, इसके लिए बहुत जरूरी है कि हमारे काम की प्रक्रिया वास्तविक अर्थों में सहभागी हो।
- समुदाय के लोग खुद अपनी बात कहें और बदलाव की पहल में नेतृत्व करे।
- इस प्रक्रिया का मूल आधार है कि हम सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में समाज की बातों को सुनें, उनका विश्लेषण करें, बहस में शामिल हों और हर सीख को दर्ज करें।

लोग जानते भी हैं और समझते भी हैं!

इन अच्छी स्थितियों को हासिल करने के लिए जरूरी है कि लोगों को, महिलाओं को, समाज को कार्यक्रम या पहल के केंद्र में रखा जाए। यह धारणा उचित नहीं है कि समुदाय के पास स्वास्थ्य और पोषण से जुड़ी समझ नहीं है। वास्तविकता यह है कि कई विषयों पर समुदाय के पास बेहतर समझ और जानकारियां हैं।

> अगर समुदाय से बातचीत में खुलापन और एक दूसरे के प्रति सहजता हो तो सम्भव है कि बदलाव की पहल आसान होगी, क्योंकि तब वे पहल में हितग्राही नहीं, बल्कि साझेदार होंगे।

सहभागी प्रक्रिया में गरिमा जरूर होनी चाहिए यानी समुदाय के विचारों या रहन-सहन या विश्वास को खारिज न किया जाए, उन्हें निकृष्ट साबित करने का जतन न किया जाए।

विचारों एवं अनुभवों को सुनना

सामुदायिक बैठक/संवाद या सामुदायिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया के दौरान हमें सहभागियों के विचारों एवं अनुभवों को महत्व देना होगा। इसके लिए जरूरी है कि सहभागियों की बातों को ध्यान से सुनें। हम समुदाय के लोगों के स्वास्थ्य एवं पोषण के संदर्भ में उनकी चुनौतियों एवं उनके अनुभवों को सुनकर किसी स्थिति को ठीक से समझ सकते हैं।

अच्छे श्रोता कैसे बनें?

सुनना एक बड़ी साधना है। सुनने के लिए अपनी जुबान, दिमाग और दिल को नियंत्रण में रखना होता है। सच तो यह है कि यदि पूरी बात सुन ली जाए, तो समस्या का आधा विश्लेषण हो जाता है।

हम कई बार अपनी बात कहना चाहते हैं, लेकिन हमें अपनी बात कहने के लिए उचित मौके या अवसर के लिए अपनी इच्छा को रोककर धैर्य से इंतजार करना बेहतर होता है।

- श्रोता का सबसे बड़ा गुण धैर्य है। बातचीत के दौरान जब भी आपको लगे कि आपको बोलने की तत्पर इच्छा है, तब धैर्य से पहले सुनें और फिर अपनी बात कहें।
- चुप रहना भी एक कला है। बोलने से अधिक सुनने पर ध्यान दें, यह सोच कर चलें कि 'मुझे सुनना है'। कई अवसरों पर बोलने के बजाय सुनना ज्यादा मददगार होता है ताकि सामने वाला व्यक्ति खुलकर सब कुछ बोल सके।
- जब भी आप किसी की बात सुन रहे हैं या किसी से अपनी बात कह रहे हैं तो उन पर अपनी नजरों को आमने-सामने बनाए रखें। इससे सुनाने वाला या सुनने वाला बात पर ध्यान केन्द्रित रखता है और बातचीत या संदेश का आदान-प्रदान प्रभावी होता है।

- सुनने की प्रक्रिया में केवल कान और दिमाग नहीं, बल्कि पूरा शरीर शामिल होता है। अच्छे श्रोता बनने के लिए आपको इसका ख्याल रखना होगा कि आपके हाव भाव सकारात्मक इशारे करें।
- सुनते समय जब तक आवश्यक न हो किसी की बात को अचानक काटें नहीं या बीच में रोके नहीं।
- कई बार ऐसी परिस्थितियां निर्मित होती हैं जब लोग न बोलें, ऐसे में जरूरी नहीं है कि सुगमकर्ता खुद अधिक बोलने लगे या निष्कर्ष निकालने लगे। हमें संयम रखने की जरूरत को हमेशा ध्यान रखना है।

अच्छा श्रोता बनने के लिए जरूरी है कि -

- सुनने की प्रक्रिया में यह ध्यान रखें कि जिसे आप सुन रहे हैं और वे जो कह रहे हैं, उसके पीछे उनकी मंशा क्या है।
- जैसा आप सोचते हैं, उससे भिन्न विचारों को सुनने के लिए अपने कान न बंद करें।
- जिसे आप सुन रहे हैं, उसके प्रति पहले से कोई धारणा न बनाएं।

अच्छे श्रोता बनने का कौशल कब प्रयोग करें?

- जब हम किसी से सवाल करते हैं।
- जब कोई यह सवाल करता है कि क्या मैं आपसे बात कर सकता हूँ?

अच्छा श्रोता बनने का प्रयोग कैसे करें?

अच्छा श्रोता होने का अर्थ यह है कि हम न केवल दूसरों की बात को सुनें और समझें बल्कि उन्हें यह दर्शाना भी होता है की हम उनकी बात सुन और समझ पा रहे हैं। उन्हें बोलने वाले के सामने अपनी दृष्टि बनाए रखना होता है और किसी तरह का हस्तक्षेप नहीं करना है।

संवाद और बहस

हमें यह तय करना होता है कि
हम कब बहस में होंगे और कब संवाद में होंगे?
वस्तुतः बहस का उद्देश्य होता है
अपने-अपने पक्ष को साबित करने के लक्ष्य के साथ प्रस्तुत करना।
वहां मकसद होता है जीतना।
स्वयं को सही साबित करना।

बहस में निर्णायक होना जरूरी है – अदालत में बहस ही होती है, लेकिन उस बहस को केवल पक्ष–विपक्ष या आरोपी और फरियादी के वकील ही नहीं सुनते हैं। वे तो बहस करते हैं। उन्हें सुनने वाले न्यायाधीश होते हैं। अगर केवल वकील ही बहस करें और उन्हें ही बहस के आधार पर फैसला करना हो, तो फैसला हो ही नहीं सकता। कभी निर्णय न हो पाएगा। बहस का कोई भी अर्थ तभी है, जब कोई तीसरा पक्ष उसे सुने। तीसरा पक्ष निष्पक्ष होना चाहिए। तीसरा पक्ष जानकार होना चाहिए। तीसरे पक्ष को परीक्षण करने का कौशल आना चाहिए, तभी वह निष्कर्ष प्रस्तुत कर सकता है। बहस में शामिल पक्ष निष्कर्ष नहीं निकाल सकते हैं।

लेकिन जब संवाद होता है, तब दो व्यक्तियों के बीच किसी निर्णायक की जरूरत नहीं होती है। चूंकि वहां हार–जीत की हिंसा नहीं होती हैं, वहां एक किस्म की स्वीकार्यता होती है। संवाद में यह भी होता है कि एक व्यक्ति को पता चल जाता है कि दूसरा व्यक्ति सही नहीं है, फिर भी वह उसे तत्काल खारिज नहीं करता है। संवाद में जब यह देखा जाता है कि किसी बात से दूसरे व्यक्ति/पक्ष को भावनात्मक पीड़ा हो सकती है, तब पहला पक्ष बहुत सम्वेदनशीलता के साथ अपनी बात रखता है। संवाद से जब बात स्पष्ट हो जाती है, तब दोनों पक्ष उसे स्वीकार करने की तैयारी भी रखते हैं।

जब हम टीम में होते हैं, तब दो पक्ष और एक निर्णायक नहीं होता है। वहां दो विचार हो सकते हैं, जिन्हें दोनों पक्षों को ही संस्था/लक्ष्य के नजरिए से सुलझाना होता है। अतः वहां बहस की नहीं, बल्कि संवाद की जरूरत होती है।

ताकत और हिंसा – यह समझना जरूरी है कि हमारी वर्तमान सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था में व्यक्ति को प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम और प्रभावशाली होना बहुत जरूरी माना जाता है। सक्षम और प्रभावशाली होने का दबाव व्यक्ति के भीतर हिंसा की जड़ें जमा देता है। हिंसा केवल भौतिक ही नहीं होती है। अपने भावों से, अपनी अभिव्यक्ति के तरीकों से, अपने काम करने की शैली से भी वे हिंसा करते हैं। यही हिंसा बहस में भी आ गई है। हम यह विचार नहीं करते हैं कि तेज आवाज, कठोर हाव–भाव या ताकत के बल पर किसी बहस में आज हम अपनी बात साबित कर सकते हैं, लेकिन कल हो सकता है कि कोई ज्यादा कठोर या ज्यादा ऊंची आवाज में बात करने वाला व्यक्ति बहस का हिस्सा हो। तब वह अपनी बात मनवा लेगा।

इसके उलट संवाद में हम यह लक्ष्य लेकर नहीं चलते हैं कि सबको हमारी बात मानना ही है। हम अपनी कहानी, अपने तरीके से, अपने तर्कों और तथ्यों के साथ, अपने अनुभव के आधार पर कहते हैं और कहते रहते हैं। हमारे हावभाव, स्वर, संयम और तर्कों का गठजोड़ ही अन्य पक्षों को प्रभावित कर सकता है।

संवाद रिश्ते खत्म नहीं करता – बहस में बात हार–जीत से या मेरे पक्ष–उसके पक्ष की स्थापना से विराम पाती है। हो सकता है फिर बहस ही न हो। हो सकता है कि फिर उनमें बात ही न हो, लेकिन संवाद में ऐसा नहीं होता है। संवाद में अल्पविराम हो सकता है, पूर्ण विराम नहीं।

जिज्ञासा – बहस में तात्कालिक रोमांच हो सकता है, लेकिन जिज्ञासा नहीं होती। न तो कहने वाले में जिज्ञासा होती है कि उसकी बात पर क्या सवाल आएंगे ? उस बात को कैसे ग्रहण किया जाएगा ? और न ही सुनने वाले में जिज्ञासा होती है कि वह स्पष्टता के लिए प्रश्न पूछे। वह तो पूरी बात सुने बगैर ही प्रतिक्रिया देने की तैयारी कर रहा होता है।

बहस में 'मैं'	संवाद में 'मैं'
मेरी मान्यता यह होती है कि कोई सही जवाब है और मैं उस जवाब को जानता हूँ।	मेरी मान्यता होती है कि जवाब के कई टुकड़े होते हैं और ये टुकड़े कई लोगों में बिखरे होते हैं। सबकी बातों को सुनकर हम उन टुकड़ों को जोड़कर समाधान/जवाब खोज सकते हैं।
प्रतिस्पर्धा में हूँ। बहस में शामिल लोग दूसरे व्यक्ति/उनके पक्ष को गलत साबित करने की कोशिश करते हैं।	साझा प्रक्रिया में हूँ। जिसमें शामिल लोग साझा समझ बनाने के मकसद से काम करते हैं।
बेहतर हूँ। दूसरों को सुनते-सुनते, बिना ध्यान से सुने हुए तत्काल उत्तर या प्रतिक्रिया खोजता/तैयार करता हूँ।	मैं ध्यान से सुनता हूँ। उसे समझता हूँ। उसका अर्थ समझता हूँ और सहमत होने वाले पक्ष खोजता हूँ।
मैं जीतूं। यही लक्ष्य है।	कुछ ऐसा बेहतर हासिल करना, जो सबके लिए बेहतर हो।
मैं अपनी धारणाओं को सत्य/सच के रूप में प्रस्तुत करता हूँ और उसे सही साबित करने के लिए जुटता हूँ।	मैं अपनी धारणाओं को परखने, उनकी सत्यता की पड़ताल के लिए प्रस्तुत करता हूँ।
मैं दूसरे पक्ष की आलोचना करता हूँ।	मैं हर पक्ष का परीक्षण और पुनर्परीक्षण करता हूँ।
मैं दूसरे पक्ष के खिलाफ अपने पक्ष को सही साबित करता हूँ।	मैं मानता हूँ कि दूसरों के विचार और अनुभव मेरी समझ और विचारों को बेहतर बना सकते हैं।
मैं ऐसे निष्कर्ष चाहता हूँ जो मेरे पक्ष/नजरिये को स्थापित करें।	मैं नए विकल्पों के लिए तैयार रहता हूँ।
मैं अन्य व्यक्तियों के पक्ष/विचारों में कमजोरी खोजता हूँ।	मैं अन्य व्यक्तियों के विचारों में ताकत और उपयोगिता खोजता हूँ।
मुझमें जिज्ञासा नहीं होती है। न कहने में, न सुनने में।	मैं जिज्ञासा रखता हूँ।

विचार का विस्तार संवाद से ज्यादा होता है – बहस से विचार का विस्तार हो, ऐसा कम ही दिखाई देता है। लेकिन संवाद से विस्तार जरूरी होता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि संवाद में सभी पक्षों को अपना पक्ष रखने की गुंजाइश होती है और दूसरा पक्ष उसे खारिज करने के लिए तत्पर नहीं होता है। संवाद की बुनियादी शर्त है कि खारिज करो, लेकिन पहले सुनो, समझो और फिर तय करो कि सहमाति है या असहमति।

सराहना करना – ऐसा हो ही नहीं सकता कि किसी व्यक्ति के पास कुछ विलक्षण विचार या नजरिया या कौशल न हो। जब हम बहस में होते हैं, तब हम दूसरे पक्ष को बिना उसकी विलक्षणता को जाने ही प्रतिक्रिया देते हैं या उसे कमजोर साबित करने में जुटते हैं।

बहस में दूसरे पक्ष के किसी विचार या नजरिये की सराहना नहीं करते हैं, किन्तु संवाद में, गुफ्तगू में अच्छे और नए विचारों की हम सराहना करते हैं। हम यदि ध्यान से सुनेंगे, तो हम पाएंगे कि हर व्यक्ति कुछ न कुछ अच्छी बात सिखाता है, सिखाता ही है।

प्रभावी अभिमत या फीडबैक कैसे दें?

राजू, मुकाम संस्था में एक परियोजना के तहत 8 लोगों की टीम के साथ काम करते थे। टीम की व्यक्तिगत एवं सामूहिक जिम्मेदारियां निर्धारित थीं। संस्था द्वारा समुदाय के साथ स्वास्थ्य के मुद्दे पर निरंतर संवाद एवं गतिविधियाँ आयोजित होती थीं। संस्था की छवि समुदाय, प्रशासन एवं आर्थिक सहायता प्रदान करने वाली संस्थाओं में भी अच्छी थीं। संस्था में समुदाय के साथ काम करने वाली टीम सहभागी प्रक्रिया से अपनी साप्ताहिक, मासिक एवं त्रैमासिक योजना तैयार करती थी। अपने कार्यक्रम की रिपोर्ट सभी साथी महीने की आखिरी तारीख को प्रस्तुत करते थे। टीम की रिपोर्ट को समेकित करके कार्यक्रम प्रबंधक आर्थिक सहयोग करने वाली संस्था को भेजते थे, जिसके आधार पर आर्थिक सहायता प्रदान करने वाली संस्था अगली तिमाही की राशि जारी करती थी।

संस्था द्वारा पिछली तिमाही की रिपोर्ट भेजने में 15 दिन की देरी हो गयी, यानि रिपोर्ट समय से नहीं जा सकी। संस्थागत स्तर पर रिपोर्ट समय से न भेज पाना बेहद गम्भीर बात थी। इससे संस्था के कामकाज एवं उसकी विश्वसनीयता पर सवाल खड़ा हो गया। संस्था की छवि और साख पर असर पड़ने की बात जो थी। रिपोर्ट समय से न भेजने का कारण यह था कि राजू ने पिछले माह की मासिक रिपोर्ट नहीं जमा की थी, वह आखिरी दिन जरूरी काम होने का बहाना बनाकर अवकाश पर भी चले गये थे। इस कारण आर्थिक सहायता प्रदान करने वाली संस्था ने राशि जारी नहीं की। 8 लोगों का अगले माह के मानदेय का भुगतान नहीं हो सका। संस्था में काम करने वाले अधिकतर लोग आर्थिक रूप से कमजोर थे एवं मानदेय न मिलने के कारण आर्थिक रूप से संकट की स्थिति में आ गये और कुछ लोगों ने इस सम्बंध में संस्था के वरिष्ठ स्टाफ को पत्र भी लिखा। कुछ लोगों ने पारिवारिक जरूरतों को पूरा करने के लिए ब्याज पर कर्ज भी लिए। यह परिस्थिति केवल एक रिपोर्ट न प्रस्तुत होने की वजह से बनी।

अगले माह की पहली तारीख को टीम की बैठक हुई। सबने अपने काम के बारे में

बताया और आगामी माह की योजना साझा की। रमन्ति ने अपने काम के बारे में बताने के साथ ही समय पर मानदेय न मिलने के कारण के बारे में पूछा। सोहन ने भी मानदेय न मिलने से उनके परिवार की परेशानियों के बारे में बताया। अन्य साथियों ने भी आर्थिक संकट के बारे में अपनी बात रखी। चर्चा में यह बात निकलकर आई कि एक साथी की समय से रिपोर्ट न जमा करने के कारण यह स्थिति बनी। कुछ साथियों ने राजू की आलोचना शुरू कर दी, कुछ ने कठोर शब्द भी कहे।

कार्यक्रम प्रबंधक ने राजू को कहा कि समय से रिपोर्ट के बारे में पहले बात कर लेते तो यह स्थिति नहीं बनती, आगे से हम सबको रिपोर्ट समय से जमा करना सबसे अनिवार्य है, हम इस मामले में कोई समझौता नहीं करेंगे। इस बात से राजू पर दबाव बना और व्यथित होकर मीटिंग से उठकर चले गये और उस दिन वापस ऑफिस नहीं आए। चर्चा में यह भी सुनने में आया कि राजू संस्था छोड़ना चाहते हैं।

अगले दिन सेवंती ने राजू से बात की और बताया राजू आप बहुत मेहनत और निष्ठा से काम करते हैं और समुदाय में आपकी बहुत अच्छी छवि है, रमई काका कल आपको पूछ रहे थे। क्या कोई परेशानी है इन दिनों, कोई मदद की जरुरत है? राजू बोले- सेवंती दीदी मुझे रिपोर्ट लिखने में बहुत कठिनाई होती है, मुझे रिपोर्ट लिखने का अनुभव नहीं हैं, हम समुदाय में सबसे आसानी से बात कर लेते हैं और सब काम समय से और ठीक से हो जाता है, पर रिपोर्ट लिखना नहीं आता। रमन्ति ने कहा- कोई बात नहीं हम आपको मदद करेंगे, यह काम आप सीख सकते हैं, हम जो करते हैं वही रोज डायरी में लिखते जाना है बस, उसी से तो रिपोर्ट बन जाती है। लेकिन यह समय से करना जरूरी है, आप ही सोचो रिपोर्ट न प्रस्तुत होने से सबके मानदेय का भुगतान रुक गया। आपका मानदेय भी रुक गया। आपके घर में भी परेशानी हुई होगी। आप पहले बात कर लेते तो आपकी रिपोर्ट भी समय से जमा हो जाती एवं सबको समय से मानदेय भी मिल जाता। इन सबके साथ एक और बहुत महत्वपूर्ण बात है संस्था की छवि की। इससे यह संदेश जाता है कि हमारी संस्था जवाबदेह नहीं है। कार्यक्रम प्रबन्धक रेनू ने राजू को रिपोर्ट लिखने के बारे में कुछ तरीके बताए और एक गतिविधि की रिपोर्ट बनाने के लिए जिम्मेदारी सौंपी।

राजू को बात समझ में आई और उसी दिन रिपोर्ट बनाई और प्रस्तुत की।

- ***राजू समय से रिपोर्ट क्यों नहीं जमा कर सके?***
- ***राजू को कैसा फीडबैक मिला? इसका राजू पर क्या असर हुआ?***
- ***फीडबैक देना क्यों जरूरी है?***
- ***क्या फीडबैक नियमित रूप से हर कामकाज में होना चाहिए?***
- ***राजू ने संस्था छोड़ने के बारे में क्यों सोचा?***

किसी समूह में प्रभावी अभिमत से तात्पर्य है ऐसा अभिमत जो उस समूह के कामकाज को बेहतर बनाने में सहायक सिद्ध हो सके। प्रभावी अभिमत का उद्देश्य है दिए गए कार्य को बेहतर बनाना। जब कोई कार्यक्रम संचालित किया जाता है, कोई योजना लागू की जाती है या कोई भी भूमिका निभाई जाती है, तब दूसरे व्यक्ति (जो समूह के भाग नहीं भी हो सकते हैं) या समूह के ही साथी उस कार्यक्रम/योजना के बारे में अपना अभिमत देते हैं कि उनके नजरिए से वह कैसा रहा? कौन सा पक्ष प्रभावी रहा या कौन सा पक्ष कमजोर रहा? इसके साथ ही यह भी बताया जाता है कि जहां सुधार की जरूरत है, तो उसे कैसे किया जा सकता है?

अभिमत और समीक्षा में या अभिमत और मूल्यांकन में अंतर होता है। अभिमत व्यक्तियों द्वारा दिया जाता है और यह उनका अनुभव या नजरिया हो सकता है।

हम बतौर सामाजिक प्राणी एक दूसरे के काम, व्यवहार, सोच और सपनों के बारे में जानते-समझते रहते हैं। अक्सर हम केवल जानते हैं लेकिन जब कुछ या कई व्यक्ति एक ही मकसद से जुड़ते हैं, तब एक दूसरे के बारे में, व्यवहार और काम की प्रक्रिया को न केवल देखते, जानते और समझते हैं, बल्कि उस पर अपने विचार/अभिमत भी व्यक्त करते हैं कि किया गया काम कैसा था? क्या प्रक्रिया सही थी? क्या कहीं कुछ बेहतर किया जा सकता था? यदि कुछ अलग तरीके से किया जाता तो क्या होता? किसी का व्यवहार सही है या नहीं? उसमें क्या बदलाव किया जा सकता है? बदलाव क्यों लाया जाना चाहिए? ये कुछ व्यापक बिंदु हैं, जो समूह में काम करने वाले व्यक्ति एक दूसरे के बारे में या व्यापक काम/प्रक्रिया के बारे में अभिमत के रूप में व्यक्त करते हैं या कर सकते हैं?

अभिमत देने से संबंधित व्यवहारिक सिद्धांत

- व्यक्ति की बारे में नहीं, उसके व्यवहार पर वर्णन के साथ अभिमत खोजिए।
- अपमानित करने / कमजोर साबित करने की कोशिश न करें।
- किसी के बारे में निर्णय / निष्कर्ष ना देना या चिप्पी न चिपकाना।
- अभिमत में काम / परिणाम पर ध्यान दें।
- दूसरों को बदलने की कोशिश न करें।
- यदि कोई असहमत हो, तो उसे सहमत करने की कोशिश न करें।
- अभिमत / प्रतिक्रिया, सलीके / गरिमा के साथ व्यक्त की जाए।
- अभिमत / प्रतिक्रिया व्यक्त करने से पहले व्यक्ति/समूह को यह बताएं कि आप अभिमत व्यक्त कर रहे हैं।
- अभिमत को स्पष्ट रखें और अस्तित्व/गरिमा का विषय न बनाएं।
- अभिमत में आप जो बोलेंगे, उसके साथ ही बहुत महत्वपूर्ण होते हैं शारीरिक–चेहरे के हाव–भाव। उनसे गरिमा और गम्भीरता का अहसास कराएं।
- जिसका अभिमत/विचार है, वही अपनी बात व्यक्त करे, कोई और नहीं।
- बहुत जरूरी है कि अभिमत में केन्द्रित रहें, उसका सामान्यीकरण न करें।
- अपनी बात/अभिमत को किसी दूसरे के अभिमत में न मिलाएं।
- अभिमत सही समय पर व्यक्त किया जाना चाहिए।
- एक बार में सभी पक्षों के साथ अभिमत को व्यक्त करें।
- अपने अभिमत में व्यावहारिक सलाह/समाधान को जरूर शामिल करें।
- ध्यान दीजिए और यदि उपयोगी लगे तो सहयोग देने का विचार भी प्रस्तुत करें।

अभिमत लेने से सम्बंधित

- अभिमत हमें एक व्यक्ति, एक सामाजिक कार्यकर्ता और एक जिम्मेदार भूमिका निभाने वाले व्यक्ति के रूप में बेहतर करता है। इसे स्वीकार करना चाहिए।
- अभिमत देने वाले व्यक्ति को अपना विरोधी न मानें।
- अभिमत/प्रतिक्रिया को गम्भीरता से सुनना और उसे लागू करने की वास्तविक कोशिश करना। यदि ऐसा नहीं करते हैं, तो आप अपना स्थान और गरिमा खोते जाते हैं।
- अभिमत देने वाले व्यक्ति/व्यक्तियों को यह बताना कि उनकी बात महत्वपूर्ण है और आप इसका पूरा सम्मान करते हैं।

एक संदर्भ में अभिमत/फीडबैक देना

यदि किसी खास काम या संदर्भ के बारे में अभिमत लिया जाए तो इससे उस काम को बेहतर बनाने में मदद मिलती है। इससे आपसी समझ बेहतर होती है और नाकामी की आशंका कम होती है।

जब हम समूह/संस्था में कोई काम करते हैं, तब उसके पीछे हमेशा एक मकसद होता है। यह जांचते रहना जरूरी होता है कि हमारे काम का/परियोजना का मकसद क्या है? क्या उनका व्यवहार, उनकी तैयारी और उनकी गतिविधियाँ उसके अनुरूप हैं? यह जांचने के लिए वे दो तरह की व्यवस्थाओं का उपयोग करते हैं – काम/गतिविधि/व्यक्ति के व्यवहार पर साथियों/समूह से अभिमत लेते रहना और निश्चित समयांतराल पर समीक्षा और मूल्यांकन करते रहना। नियमित रूप से (या यह कहें कि निरंतर) समूह में अभिमत लेने और देने (फीडबैक) की व्यवस्था होनी चाहिए।

यह व्यवस्था उनके काम को ही नहीं, बल्कि काम करने के तरीकों को भी बेहतर बनाती है। वातावरण में रचनात्मकता और सोच-विचार का विस्तार होता है, एक दूसरे के प्रति समझ विकसित होती है और असफलता की आशंकाओं को कम किया जा सकता है।

अभिमत - सराहना से शुरुआत

अभिमत व्यक्त करना एक मानवीय प्रक्रिया है। यदि इसकी शुरुआत ही सराहना से की जाए तो हम सम्बंधित व्यक्ति या समूह को यह अहसास दिला सकेंगे कि हमने विषय को गहराई से समझा है और हम उसके विभिन्न पहलुओं से अवगत हैं।

अभिमत देना दूसरा चरण या स्तर है। पहला स्तर है संवाद की ऐसी शुरुआत करना कि दो व्यक्तियों या समूह में शामिल सभी व्यक्तियों से तार जुड़ जाएं। एक दूसरे के प्रति कोई दुर्भावना या नकारात्मक नजरिया न हो। सहमति-असहमति होगी, किन्तु दूरी न हो। यही पहला चरण है इसे जांच लेना चाहिए।

इस स्तर को व्यवहार में लाने का एक प्रभावी तरीका है सराहना से शुरुआत। ऐसी सराहना करना, जिससे आप दूसरे व्यक्ति या समूह के अन्य सदस्यों को यह अहसास करा सकें कि आपने उस विषय/गतिविधि/ कहानी या व्यवहार का गहराई से अवलोकन या अध्ययन किया है! आप सतही बात नहीं कर रहे हैं। आप विषय के विभिन्न पहलुओं से वाकिफ हैं।

अभिमत व्यक्त करना मशीनी नहीं, मानवीय प्रक्रिया है। मशीन गलती बता सकती है, लेकिन अभिमत देने का मतलब गलती बताना नहीं है। इसका मतलब है किसी भी काम/व्यवहार/कहानी/प्रक्रिया के बारे में दूसरों के नजरिये और अनुभव को जानना। एक तरह से यह उल्लेख किया जाना चाहिए कि जब एक व्यक्ति समानुभूति के साथ किसी व्यक्ति के व्यवहार या उसके काम या काम की किसी प्रक्रिया को महसूस करता है, तब उसके मन में

गतिविधि/व्यवहार के बारे में कुछ 'गुणात्मक' विचार उत्पन्न होते हैं। यही अभिमत होता है।

अभिमत व्यक्त करने की प्रक्रिया का पहला स्तर होता है यह बताने/जताने से कि आपने क्या देखा/क्या अनुभव किया? शुरू में ही आप अभिमत व्यक्त नहीं करते हैं। आप यह बताते हैं कि आपके अनुसार गतिविधि क्या थी? उसका मकसद क्या था? इसमें कौन-कौन से चरण आपने देखे? आपको यह उपयोगी/जरूरी क्यों लगा? इसमें क्या बात बहुत अच्छी लगी? हो सकता है कि यह केवल एक ही बात हो। या आपको अवधारणा अच्छी लगी हो, किन्तु क्रियान्वयन अच्छा न लगा हो, तो भी अवधारणा की पहले सराहना कीजिए। यानी शुरुआत एक सुकून देने वाले संदेश से की जाना चाहिए। यह शुरुआत सबकी जिज्ञासा को बढ़ाएगी और यह संदेश देगी कि आप एक सकारात्मक नजरिए से अभिमत व्यक्त करने वाले हैं।

फीडबैक/अभिमत जरूरी क्यों हैं?

नियमित रूप से बातचीत करना, अपने साथियों और सहयोगियों के बीच गतिविधियों पर अभिमत व्यक्त करना न केवल आपसी रिश्ते प्रगाढ़ करता है बल्कि वह संस्था को भी मजबूत बनाता है।

नियमित रूप से, स्पष्टता के साथ और प्रभावी तरीके से किसी भी घटना, अपने साथी/सहयोगी के व्यवहार, समूह के कार्यक्रम या प्रक्रिया या रिपोर्ट या कहानी पर अपनी बात/अभिमत व्यक्त करना रिश्तों को मजबूत बनाने के साथ-साथ संस्था को जीवंत और मजबूत बनाने के लिए बहुत जरूरी है। अक्सर वे एक शब्द सुनते हैं अभिमत/फीडबैक देना या अभिमत/फीडबैक लेना।

अभिव्यक्ति में खुलापन आपसी विश्वास को बढ़ाता है और आपसी विश्वास अभिव्यक्ति के लिए और ज्यादा जगह निर्मित करता है।

इससे समूह के सदस्यों को एक-दूसरे के बारे में और ज्यादा जानने-समझने का मौका भी मिलता है। पहचान गहरी होती है। संस्था/समूह के कामों की समीक्षा का सबसे पहला स्तर ही यह है, जब हम किसी भी गतिविधि/घटना/प्रक्रिया/व्यवहार पर अभिमत व्यक्त करते हैं।

अक्सर संस्थाओं में खुलेपन की इतनी कमी होती है, या इतनी मशीनी व्यवस्था होती है, कि वहां अभिव्यक्ति और अभिमत के लिए कम ही स्थान होता है।

होता यूँ है कि अभिमत को समूह में व्यक्तिगत आरोप या आक्षेप के रूप में देखा जाता है। यह सही नहीं है।

समूहों में अभिमत की व्यवस्था से इसलिए भी दूरी बनती है क्योंकि साथियों को लगता है कि इससे उनके काम पर सवाल खड़ा होता है। कठोर अभिमत को असफलता की घोषणा मान लिया जाता है।

यह भी माना जाता है कि इससे सबके सामने अपमान होता है। ये धारणाएं व्यावहारिक हैं, किन्तु उचित नहीं हैं।

वास्तव में जब एक व्यक्ति अपने साथी/सहयोगी के व्यवहार, समूह के कार्यक्रम या प्रक्रिया या रिपोर्ट या कहानी पर अपना अभिमत व्यक्त करता है, तो इससे संस्था के काम को नए विचार मिलते हैं। काम को बेहतर करने वाले हिस्सों के बारे में पता चलता है। यदि कहीं कुछ चूक हो रही होती है, तो उसे ठीक करने का अवसर मिलता है। जब हम समूह के भीतर ही अपनी चूक को ठीक कर लेते हैं, तो हम समूह के बाहर आलोचना या अपमानित होने से बच जाते हैं।

यदि आपको अपने साथियों या समूह के अन्य सदस्यों पर विश्वास नहीं है, तब ही आप फीडबेक की व्यवस्था से जी चुराएंगे।

यदि आपको अपने काम को बेहतर करने की इच्छा नहीं है और आप अपना काम केवल पूरा कर देना चाहते हैं, तब भी आपको फीडबैक में रूचि नहीं रहेगी।

महत्वपूर्ण - फीडबैक लेने-देने की व्यवस्था एक विचार और समझ आधारित परिपक्व व्यवस्था होती है। ऐसा नहीं है कि बिना बात/काम/रिपोर्ट को समझे ही फीडबैक दिया जा सकता है। फीडबैक देने के लिए उस व्यक्ति/काम/गतिविधि को भी अच्छे से जान लेना-समझ लेना जरूरी होता है, जिसके बारे में फीडबैक दिया जा रहा है।

प्रभावी फीडबैक के लिए तैयारी

अपनी मंशा को जांचें

किसी भी व्यक्ति या समूह को अभिमत देने से पहले यह जांचिए कि उनकी हमारी मंशा (अभिमत देने वाले की) क्या है? हम क्यों अभिमत दे रहे हैं?

- किसी व्यक्ति की क्षमता/प्रदर्शन को बेहतर बनाना है; या
- उसे कमजोर/नाकारा/क्षमताहीन साबित करना है।

वास्तव में अभिमत देने का उद्देश्य क्षमता/प्रदर्शन या काम को बेहतर बनाना होता है। यह काम कठोर, आलोचक और हमलावर होकर नहीं किया जा सकता है। यदि आपकी मंशा सकारात्मक और रचनात्मक है, तो आपके द्वारा दिया गया फीडबैक सकारात्मक तरीके से ही स्वीकार किया जाएगा।

अवसर क्या है?

जब कोई भी गतिविधि या कार्यक्रम पूरा होता है, तब ही फीडबैक देना अच्छा माना जाता है। जब कोई व्यक्ति किसी कार्यक्रम को संचालित करने या पूरा करने की भूमिका निभा रहा होता है, तब वह उस कार्यक्रम के माहौल में ढला होता है। वह उस कार्यक्रम के बारे में वास्तव में अभिमत चाहता है। और अभिमत को स्वीकार करने के लिए तैयार रहता है। सही समय पर दिया गया अभिमत, सही समय पर सुधार/बदलाव या बेहतरी के कदम उठा लेने के लिए तैयार कर देता है।

लेकिन अगर माहौल भावुक हो या कोई चुनौतीपूर्ण स्थिति बनी हो, तब फीडबैक/अभिमत देने से बचना चाहिए।

फीडबैक किस बात/काम/पहलू पर है?

जब भी फीडबैक दिया जाता है, तब यह स्पष्ट होना चाहिए कि कार्यक्रम या भूमिका के कौन से पहलू पर अभिमत दिया जा रहा है? मसलन एक प्रशिक्षण कार्यक्रम पूरा हुआ, तो उसके कौन से पहलू पर फीडबैक दिया जा रहा है –

- सहभागियों के रहने – खाने – बैठक स्थल की व्यवस्था पर?
- प्रशिक्षण के माड्यूल और प्लान पर?
- प्रशिक्षक के प्रदर्शन पर?
- प्रशिक्षण के दौरान दी गई पठन सामग्री पर?

देह की भाषा को सम्भालें

जब भी फीडबैक दिया जाता है, तब हमारी आँखें–चेहरे और शरीर के भाव ऐसे होने चाहिए, जिनसे सामने वाले व्यक्ति या समूह को यह महसूस हो कि हम गम्भीरता से फीडबैक दे रहे हैं? शरीर की भाषा से उनके मन के भावों/मंशा का पता चल जाता है। मसलन जिसे फीडबैक दे रहे हैं, उसकी तरफ देखें, व्यंग के भाव न रखें, हंसें नहीं आदि।

फीडबैक लेने–देने की व्यवस्था में स्थायित्व हो

सामाजिक नागरिक संस्था के रूप हम निरंतर गतिविधियों का आयोजन करते रहते हैं। उनका काम एक सतत प्रक्रिया में चलता रहता है। बेहतर होगा कि हम अपनी संस्था में अभिमत/फीडबैक लेने–देने की व्यवस्था को स्थाई रूप दे दें। इससे टीम/समूह के सभी लोग तैयार हो जाते हैं और उनमें यह विश्वास पैदा हो जाता है कि यह हमारे काम को बेहतर करने के उद्देश्य से चलाई जाने वाली प्रक्रिया है। तब यह ठेस लगाने वाली प्रक्रिया नहीं होती है।

अभिमत लिखकर तैयार रखें

जब हम अपनी डायरी में कोई बिंदु लिख कर रखते हैं, तब हम ज्यादा स्पष्टता से अपना फीडबैक दे पाते हैं और कोई जरूरी बिंदु छूटता भी नहीं है। इसके साथ ही उस व्यक्ति या समूह को, जिसे हम फीडबैक दे रहे हैं, यह महसूस होता है कि हमने गम्भीरता से पूरी प्रक्रिया/कार्यक्रम को देखा–जाना–समझा है और इसके बाद ही फीडबैक दिया जा रहा है।

सामान्यीकरण न करें

कोई भी सहभागिता नहीं कर रहा था, कोई भी सत्र अच्छा नहीं था, एक भी वक्ता प्रभावी नहीं था। यह पूरा काम या गतिविधि बिना तैयारी के आयोजित की गयी। अगर ऐसे फीडबैक दिए जाएंगे, तो ज्यादा सम्भावना है कि

उन्हें स्वीकार नहीं किया जाएगा और बहस की नौबत आ सकती है। ऐसी फीडबैक गम्भीर और परिपक्व नहीं माने जाते हैं।

आलोचना कब करें?

अगर किसी संदर्भ में कोई आलोचनात्मक टिप्पणी की जानी हो, तो उसे अकेले में या सम्बंधित व्यक्ति के साथ अलग से कहें। बड़े समूह में कठोर आलोचनात्मक टिप्पणी से बचना चाहिए।

मैं या मुझे यह कहना है

फीडबैक व्यक्ति की तरफ से दिया जाता है, इसलिए अपने अभिमत को उन्हें स्पष्ट रूप से 'मैं या मुझे या मैंने' से जोड़ कर ही प्रस्तुत करना चाहिए। मसलन मुझे लगता है कि दूसरे सत्र में प्रतिभागियों की सहभागिता कम रही और प्रस्तुति में भाषण शैली ज्यादा हावी रही। फीडबैक एक व्यक्ति का नजरिया होता है।

बहुत सारे फीडबैक नहीं

किसी भी गतिविधि/कार्यक्रम/काम पर फीडबैक देते समय बिन्दुओं की सूची बहुत लम्बी नहीं बना देना चाहिए। इससे फीडबैक का महत्व और प्रभाव दोनों चले जाते हैं। ऐसी स्थिति में हमें सबसे पहले खुद यह तय करना होता है कि कौन सी बात/बिंदु सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण हैं, जिन्हें सबसे पहले कहना चाहिए। बहुत ज्यादा फीडबैक व्यक्ति के उत्साह को कम कर सकते हैं।

नकारात्मक बात ही फीडबैक नहीं होती

फीडबैक बेहतर बनाने की प्रक्रिया का हिस्सा है। जिन क्षेत्रों या पक्षों में सुधार लाना है, उस पर भी बात होना चाहिए और जो पक्ष या पहलू बहुत अच्छे हैं, उन्हें भी पूरा स्थान और महत्व दिया जाना चाहिए। मसलन तीसरा सत्र आपने बहुत अच्छे से संचालित किया। जो बातें छूट रही थीं, उन्हें आपने सही समय पर जोड़ दिया।

फीडबैक के साथ सुझाव भी दें

जब हम किसी विषय पर फीडबैक देते हैं, तब सुधार के लिए क्या पहल की जा सकती है या कौन उसमें मदद कर सकता है, यह भी जोड़ना चाहिए। इससे फीडबैक को लागू करने में मदद मिलेगी। वास्तव में फीडबैक के साथ क्रियान्वयन की एक योजना भी जुड़ी होना चाहिए। यह कतई नहीं मानना चाहिए कि फीडबैक का मतलब केवल कमियों या गलतियों की बात करना ही है। ज्यादातर मामलों में फीडबैक को लागू करना एक साझा पहल होती है।

संवाद के लिए जरूरी

निर्णय साथ न रखें – सुनते और बोलते समय निर्णयात्मक न हों इससे हम पूरी बात सुन पाते हैं और ज्यादा सही तरीके से बात सुन और समझ पाते हैं। जब हम बिना निष्कर्ष या निर्णय दिए अपनी बात कहते हैं, तो दूसरे लोग हमें बेहतर ढंग से सुनते और समझते हैं।

मतभेदों और विविधता का सम्मान – हर व्यक्ति के पास योगदान देने के लिए कुछ न कुछ है। कोई न कोई विशेषता है। उनके पास कुछ ऐसे विचार या नजरिये या अनुभव होते हैं, जिनका योगदान उनसे ही आ सकता है।

भूमिकाओं और पद को किनारे रखना – संवाद में सभी का शामिल होना जरूरी है। सभी की हिस्सेदारी जरूरी है। इससे ही संवाद का मक्खन निकल के आता है। कोई भी विचार किसी दूसरे विचार से ज्यादा या कम महत्वपूर्ण नहीं है। संवाद के लिए छोटा पद–बड़ा पद वाला ढांचा हटा देना होता है। किसी को अपना पद याद ही नहीं होना चाहिए।

जिज्ञासा, पड़ताल और पेशकार होना – संवाद में हम विचार, नजरिए, विषय को बेहतर ढंग से जानने–समझने के लिए अपनी जिज्ञासा दिखाते हैं। उनका शरीर और शरीर की भाषा यह बताती है अपनी बात कह रहे व्यक्ति को यह अहसास करवाती है कि हम उसकी बात ध्यान से सुन रहे हैं। उसके विचारों को समझ रहे हैं। पूरी बात सुनने के बाद वे अपना विचार या नजरिया सबके सामने प्रस्तुत करते हैं, ताकि उसे भी सुना और समझा जाए। हम एक–दूसरे से विचार और नजरिये ग्रहण करते हैं। अपने–अपने नजरिये को जांचते हैं। कुछ पक्ष मजबूत बनाते हैं और कुछ पक्ष छोड़ भी देते हैं। संवाद में भी हम चाहते तो यही हैं कि हमारा पक्ष स्वीकार किया जाए। इसके लिए जरूरी है कि हम दूसरों की पूरी बात को सुनें, उनसे अपनी जिज्ञासा का हल चाहें।

सुनने की कला – यह सबसे महत्वपूर्ण कला है। यह बहुत संयम मांगती है। सुनने का सलीका बहुत अभ्यास से आता है। सुनने के लिए हमें अपने अहंकार को छोड़ने का अभ्यास करना बहुत जरूरी होता है। सुनने से हमारा नजरिया ज्यादा ठोस, प्रभावी और मजबूत बनता है। जब हम हार–जीत या सबसे अच्छे विचार की होड़ से बाहर निकल जाते हैं, तब हमें कुछ और नया जानने–सीखने का मौका मिलता है। जब हम ध्यान से सुनते हैं, तब वे ज्यादा जिज्ञासा रखने लगते हैं, ज्यादा प्रश्न पूछते हैं। नए विचारों को आसानी से स्वीकार करने के लिए तैयार होते हैं। वे अपना नजरिया, विचार या विकल्प सबके सामने रखते हैं, ताकि यह पता चल सके कि उसमें से क्या बेहतर है और उसमें उन्हें क्या बदलाव लाने की जरूरत है?

सीखना और उसे दर्ज करना

जरा सोचिए कि हम अपने काम के दौरान या अपनी भूमिका निभाते हुए हम कितने लोगों, समूहों से मिलते हैं, कितने तरह के दृश्य देखते है, कितनी तरह की बातें सुनते हैं, कितने तरह के सवालों का सामना करते हैं, किस–किस तरह की समस्याओं के बारे में जानते हैं और यह भी देखते हैं कि लोग उन समस्याओं से किस तरह से निपट रहे हैं! अब सवाल यह है कि जब इतनी विविधता को हम देखते और सामना करते हैं, तब हमारी तैयारी क्या होती है? क्या हम खुले मन से सब कुछ ग्रहण करने के लिए तैयार होते हैं? या फिर हमारी पहले की जानकारियां और धारणाएं इतनी हावी होती हैं कि हम अपने सामने की विविधता, व्यक्तियों, अनुभवों को अपने भीतर समेट नहीं पाते हैं। हमारा ध्यान हमारे उस काम पर केंद्रित होता है जो हमारे परियोजना के दस्तावेजों में लिखा होता है?

सवाल यह है कि रचनात्मक काम करते हुए, क्या हम खुद रचनात्मक हो पाते हैं?

यदि हम अपनी सीखों के प्रति सजग नहीं हैं, तो हम रचनात्मक हो ही नहीं सकते। यदि हम सीख नहीं रहे हैं तो हमारी प्रक्रिया परिणामदायक नहीं होगी। यदि हम सीख नहीं रहे हैं तो हमारा काम बोझिल और मशीनी होता जाएगा।

- **सीख वस्तुतः सबसे पहला परिणाम होती है, जो आखिरी परिणाम तय करती है।**
- **सीख के बिना हासिल परिणाम खोखले और अल्प आयु होते हैं।**
- **सीख दर्ज करना जिम्मेदार और जवाबदेह होने का सूचक है।**
- **सीख दर्ज करने और साझा करने का मतलब सफलता या असफलता का मूल्यांकन नहीं होता है।**

ज्यादातर समन्वयक और नेतृत्वकर्ता सीखों को दर्ज किए जाने और सीखों का काम में इस्तेमाल करने की जरूरत को भलीभांति समझते हैं। यह व्यक्ति के निजी विकास के लिए, समूह के प्रदर्शन के लिए और संस्था की परिणाम दायक भूमिका के लिए बहुत अनिवार्य व्यावहारिक तत्व है। आमतौर पर संस्थाओं और समूहों में सीखों को तभी संग्रहीत किए जाता है, जब काम या परियोजना का मूल्यांकन हो रहा होता है। कोशिश यह होना चाहिए कि सीखों को दर्ज किया जाना एक सतत प्रक्रिया और काम का स्थायी हिस्सा हो।

वास्तव में सीखों के प्रति ध्यान रखना और उन्हें संग्रहीत करते जाना किसी भी कार्यक्रम या परियोजना का अन्तर्निहित पहलू और रणनीति होना चाहिए। इस रणनीति को समूह के नेतृत्वकर्ताओं को अनिवार्य रूप से प्रोत्साहित करना चाहिए। इससे हमें अपने अगले कदम की दिशा को तय करने में मदद मिलती है। सीखों से हमें यह पता चल जाता है कि कहाँ क्या गलती हो रही है; यह सीख हमें गलतियों को दोहराने से रोकती है।

असफलताएं हमें हतोत्साहित नहीं करती हैं, अगर हम उन्हें सीखों में परिवर्तित कर दें तो। यदि हम सीखों को सम्भालते नहीं हैं तो हम अपनी गलतियों को दोहराते हैं और संसाधनों का सही उपयोग नहीं करते हैं।

वास्तव में सीखों को ध्यान में रखने वाला हिस्सा संस्था और व्यक्ति का नैतिक दायित्व भी है ताकि –

- प्रक्रिया में समुदाय की भूमिका औपचारिक सहभागिता पर आधारित न हो।
- संसाधनों का अधिकतम उपयोग हो सके।
- वर्तमान की प्रक्रियाओं में पूर्व की सीखों को जोड़कर सही कार्ययोजना बनाई जा सके।
- भविष्य की कोशिशों के लिए ऐसी सीखों का संग्रह छोड़ा जा सके, जो गलतियों को दोहराने से समूह को बचाएं।

सीख क्या होती है?

सीखे गये पाठ का मतलब होता है परियोजना या संस्था का तयशुदा कार्यक्रम संचालित करते हुए हासिल होने वाली सीखें; कहा जाता है न कि हम अपने अनुभवों से सीखते हैं। अपनी अनुभव ग्रंथि को मजबूत और सक्रिय

करना एक अनिवार्य पहल है।

हमें सीखें हर वक्त मिल रही हो सकती हैं – जब हम समुदाय के साथ बैठक करते हैं (प्रतिभागी क्या कह रहे हैं और क्यों), जब देखते हैं कि कोई बच्चा अति गम्भीर कुपोषित है (क्यों), जब हम देखते हैं कि किसी किसान ने 2 एकड़ जमीन में अपनी वर्ष भर की जरूरत का उत्पादन कर लिया और आय भी अर्जित की (कैसे), जब हम देखते हैं कि महिला स्वास्थ्य की स्थिति गम्भीर हैं, किन्तु जब हमने पहल शुरू की तो कुछ लोगों ने विरोध किया (क्यों); किसी बस्ती में आंगनवाड़ी का संचालन बहुत अच्छे से हो रहा है और सभी बच्चे केंद्र में जाते हैं (क्यों और कैसे); किसी बस्ती में पानी का संकट है, लोग परेशान हैं (फिर भी वे पहल क्यों नहीं कर रहे हैं? बाधा क्या है); आदि।

जब व्यक्ति कोई भूमिका निभाता है, जब वह अपनी भूमिका को किसी लक्ष्य के साथ जोड़ लेता है, तो हर समय उसके साथ स्वाभाविक रूप से नई सीखें जुड़ती जाती हैं। महत्वपूर्ण है कि क्या वह व्यक्ति उन सीखों को पहचान पा रहा है? क्या उन्हें इकट्ठा कर पा रहा है? क्या सीखों का विश्लेषण कर पा रहा है? क्या सीखों से सीख कर अपने अगले कदम में कोई बदलाव ला रहा है?

सीखें क्यों दर्ज नहीं होती हैं?

शायद इसलिए कि हमने सीखों को दर्ज करना सीखा ही नहीं है या फिर हमारे समूह में सीखों को दर्ज करने की व्यवस्था नहीं है। अक्सर लोग सीखों को इसलिए साझा नहीं करना चाहते हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि अपने अनुभव बताने से सबको उसकी असफलता के बारे में पता चला जाएगा। वस्तुत: सीखों का मतलब सफलता या असफलता की जानकारी दर्ज करना नहीं है।

संवादों का दस्तावेजीकरण

हम एक प्रक्रिया में जुटे हैं। सामुदायिक बैठकें और समुदाय के साथ होने वाले संवाद एक बार में होने वाली गतिविधि नहीं है। इसमें एक बैठक में निर्णय नहीं होते हैं। एक बैठक में ही रणनीति बनकर तैयार नहीं हो जाती है। विश्लेषण भी लगातार चलता रहा है। अत: जरूरी है कि सभी बैठकों में क्या चर्चा हुई? क्या कारण बताये गए? क्या निर्णय लिए गये? किसकी भूमिका तय हुई? आदि, बातों का विस्तार से दस्तावेजीकरण किया जाए ताकि पिछली बैठक का आज की बैठक के साथ और आज की बैठक का अगली बैठक के साथ सम्बंध कायम रह सके।

जब सभी बातें लिख ली जाती हैं, तो बातों के भूल जाने से प्रक्रिया के कमजोर होने का खतरा नहीं रहता है। यह भी कि दस्तावेजीकरण के कारण सहजकर्ता और प्रतिभागी, दोनों निर्णयों या चर्चा के बिन्दुओं से मुकर नहीं सकते हैं।

दस्तावेजीकरण से जवाबदेहिता तय हो जाती है कि यह निर्णय हुआ है और इसके क्रियान्वित किया जाना है। यदि क्रियान्वित नहीं किया जाएगा तो अगली बैठकों में सवाल पूछा जाएगा।

जब प्रतिभागी यह देखते हैं कि पीएलए का व्यवस्थित दस्तावेजीकरण हो रहा है, तो वे अपनी बात भी व्यवस्थित ढंग से रखने की कोशिश करते हैं।

जब हम किसी व्यक्ति या समुदाय या समूह के साथ मिलकर उनके स्वास्थ्य एवं पोषण व्यवहारों को समझना चाहते हैं, उनके साथ मिलकर आवश्यक बदलाव हेतु कार्रवाई करना चाहते हैं तो इस पहल में होने वाली सभी प्रक्रियाओं का दस्तावेजीकरण करना इस प्रक्रिया का हिस्सा बन जाता है।

यह दस्तावेजीकरण कागजों में, रजिस्टर में, फाइलों में, कम्प्यूटर फाइलों में, फोटो में, आडियो-वीडियो, चित्रों आदि में हो सकता है। इस अर्थपूर्ण जानकारी का उपयोग आगे की प्रक्रियाओं या योजनाओं में किया जाता है।

दस्तावेजीकरण कैसे करें?

- सामुदायिक बैठकों हेतु प्रारम्भ से ही सभी तैयारी बैठकों, माड्यूल, पठन सामग्री को एक दस्तावेज के रूप में रखें।
- बैठकों में शामिल होने वाले हर सहभागी की जानकारी को रजिस्टर में दर्ज करें।
- बैठकों में होने वाली चर्चाओं एवं मिलकर तय किए गए कार्यों को दर्ज करें।
- सभी बैठकों के फोटो एवं वीडियो क्लिपिंग बनाएं।
- समुदाय द्वारा इस प्रक्रिया के दौरान व्यक्त किए गए विचारों को दर्ज करें।
- पीएलए से सम्बंधित सभी पत्रों, आमंत्रित सदस्यों, मीडिया में दी गई जानकारी को सुरक्षित रखें।
- पीएलए से सम्बंधित प्रशिक्षणों, बैठकों के आयोजन, यात्रा आदि में हुए खर्चों का भी रिकार्ड रखा जाना चाहिए ताकि बदलाव की इस प्रक्रिया में हुए व्यय का लेखा-जोखा आकलन भी किया जा सके।